बिहार का लोकगायन

लोकगीतों की अकूत संपदा से भरपूर बिहार की धरती ने एक से बढ़कर एक गायक-वादक पैदा किये हैं। जन्म, जनेऊ, विवाह, व्रत-उत्सव, कुँटौनी, पिसौनी, रोपनी आदि के समय औरतों द्वारा गाये जाने वाले विभिन्न गीतों में लोकगायन का वास्तविक स्वरूप दिखाई पड़ता है। वह अकृत्रिम होता है। उसमें उल्लास, भक्ति, प्रेम, परिहास, करुणा, उलाहना आदि के साथ ही स्वागत, विदाई आदि के भाव भी स्वाभाविक रूप मे व्यक्त मिलते हैं। खिलौना, सोहर, झूमर, ज्योनार, जँतसार, साँझा-पराती, रोपनी-गीत, होली (फाग या फगुआ), चइता (चैता) आदि दर्जनों प्रकार के गीत बिहार की मिट्टी की अपनी गूँज हैं, अंतस् की अभिव्यक्ति हैं। जनेऊ तथा विवाह के हल्दी, मंडपाच्छादन, स्नान, तिलक, स्वागत, भोजन, गुरहथी, मंगढकी, सिन्दूरदान, कोहबर, कन्या विदाई आदि विविध प्रसंगों के गीत हमारी ग्रामीण कृषि संस्कृति के अभिन्न अंग हैं। इन्हें नारी समाज ने सदियों से अपनी चेतना और स्मृति में सँजो रखा है। इनमें हमारी हजारों वर्ष पुरानी संस्कृति का इतिहास गुँथा हुआ दिखाई पड़ता है। मिथिला में नाचारी जैसे गीतों की मोहक परंपरा भी बिहार की मूल्यवान निधि है।

चैता

डॉ० अनुनय चौबे की एक पेंटिंग

बिहार में प्रचलित लोक गीतों के पाँच मुख्य भेद हैं। ये हैं – संस्कार गीत, पर्वगीत, श्रमगीत, प्रेम-मनोरंजन के गीत, गाथा गीत और ऋतु गीत। जन्म, जनेऊ, तिलक और विवाह के विभिन्न प्रसंगों पर गाये जाने वाले गीत संस्कार गीत के अंतर्गत आते हैं। पर्वगीतों में छठगीत सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण हैं। श्रमगीतों में जँतसार तथा रोपनी के गीतों की लय की तरंगें परिवेश में ऐसा नाद घोलती हैं कि सारी थकान घुलमिल कर विलीन हो जाती है। प्रेम-मनोरंजन के गीतों का प्रचलन मुख्य रूप से श्रमशील पुरुषों (चरवाहे, हलवाहे, गाड़ीवान आदि) में रहा है। ये मन की मौज के अनुसार बिरहा, लोरिका (लोरिकायन) आदि भी मुक्त भाव से गाते हैं। लोरिका, भरथरी और नैका गाथा गीतों के नायक रहे हैं। बारहमासा की परंपरा लोकगायन में भी रही है परंतु होली और चैता अलग से ऋतु गीत की पहचान बनाते हैं। बिहार के लोकगीतों के इन विभिन्न पक्षों को कबीरदास के निर्गुण पदों (निरगुन) और सूर-तुलसी के भक्ति के पदों ने इतनी गहराई तक प्रभावित किया है कि वे उसमें अभिन्न भाव से घुल-मिल गये हैं। माली जाति के लोग देवी के विशेष प्रिय भक्त माने जाते हैं। उनके गीतों में भक्ति की जो तन्मयता होती है वह अन्य किसी में नहीं देखने में आती। इन विभिन्न गीतों-गानों में ढोलक, झाल, डुग्गी, डंका (ढँढ़), हुड़ुक (या हुड़का) आदि वाद्यों का प्रयोग होता रहा है। संस्कार गीतों में औरतें भी ढोलक का उपयोग करती हैं। होली और चैता में ढोलक (ढोल) और झाल का सामूहिक वादन मस्ती तथा उमंग की समाँ बाँध देता है। इन बाजाओं को बजाने वालों का न कोई घराना है और न ही कोई गुरु-शिष्य परंपरा। अपढ़-गँवार औरतों या पुरुषों में अनेक ऐसे निकल आते हैं जिनके हाथों की कुशलता विस्मय में डाल देती है।

विंध्यवासिनी देवी

बिहार में भोजपुरी बोलने वालों की संख्या सबसे अधिक है। परन्तु मगही, मैथिली, बज्जिका और अंगिका बोलने वालों में भी ये गीत समान भाव से गाये जाते हैं। विशेषकर संस्कार गीतों में भाषा-भेद के अंतर्गत भावना तथा विषय की समानता आंतरिक एकसूत्रता के प्रमाण सामने

रख जाती है। भाषा चाहे जो हो, प्रायः सबके संस्कार गीतों में राम, कृष्ण तथा भगवान शंकर के पारिवारिक प्रसंगों की भागीदारी प्रमुखता से पाई जाती है। इनके अलावा देवी तथा गंगा की भक्ति के गीतों का गायन भी पूरी तरह पारिवारिक पृष्ठभूमि का अंग बनाकर ही होता है। इन गीतों में हर बालक या दूल्हा राम या कृष्ण और हर कन्या सीता या पार्वती होती है।

द्विजों में जनेऊ संस्कार अलग से होता है। उसके गीतों की विशेषता यह होती है कि जनेऊ के अधिकारी कुमार को गीतों में बरुआ कहा जाता है; जैसे विवाह हो रहे युवक को दूल्हा (दुलहा) या कन्या को दुलहन। तिलकोत्सव चूँकि लड़के वाले के यहाँ ही संपन्न होता है इसलिए इसके गीत उसके यहाँ ही गाये जाते हैं और उसमें लड़के को अधिक गुणवान बताते हुए उसके गुण के अनुपात में तिलक की राशि तथा उसके सामान को कम बताया जाता है। नारी समाज का कहना होता है कि ''मोर बाबू पढ़ऽलऽ पंडितवा तिलक बड़ा थोर बाटे जी।'' या ''ठग लिया लड़का हमारा जी समधी बैमाना।'' हल्दी-कलशस्थापन से चौथारी तक अलग-अलग प्रसंगों के गीत वर तथा कन्या दोनों के यहाँ नियमित रूप से गाये जाते हैं। साँझा-पराती में घर की बुजुर्ग नारियाँ धीमी आवाज में गाती हुई पितरों का आह्वान और वन्दन करती हैं।

लोक वाद्य
डॉ० अनुनय चौबे की एक अन्य पेंटिंग

द्वार पूजा के लिए दरवाजे पर आई बारात के स्वागत में गीत गाती नारियों का समूह घर के वयस्क सदस्यों का नाम ले-लेकर अगवानी करने का आग्रह करता है। उनका कहना होता है कि ''आपन खोरिया बाहारऽ ना कवनऽ (अमुक) देवा आवऽताऽरेंऽ दुलहा दामाऽद ए।'' आगे परीछावन, चुमावन आदि के गीत तो होते ही हैं, भोजन करने आये समधी के पैर धोने के आग्रह वाले गीतों को गोड़धोआई कहा जाता है। द्वारपूजा के बाद और भोजन करने बैठ चुके बारातियों से परिहास-भाव की अभिव्यक्ति के रूप में उनकी पत्नी, बहन, फुआ (बूआ) आदि को लगाकर जो गालियाँ गाई जाती हैं उनमें औरतों की उम्र तथा पद की सारी सीमाएँ ध्वस्त हो जाती हैं। किशोरियों से लेकर वयस्क महिलाओं तक का समूह समवेत रूप से समधी तथा अन्य बारातियों की बहन, बूआ, पत्नी आदि का पूरे खुलेपन के साथ उद्धार करता जाता है और बाराती मुस्कुराते रहते हैं। उसमें वर पक्ष के पुरोहित और नाई भी नहीं छूटते।

©BSEB NOT TO BE PUBLISHED

विवाह के गीतों में सिन्दूरदान और बेटी की बिदाई के गीत करुण भाव के मांगलिक पक्ष के परिचायक होते हैं। कहा जा सकता है कि करुण भाव का प्रवेश सिन्दूरदान के गीतों से ही होता है जो विदाई-गीत में चरम स्थिति को प्राप्त कर लेता है। उन प्रसंगों पर जब गीत शुरू होते हैं तो गाने वाली नारियों का स्वर तो अँसुओं में फँसने ही लगता है, उपस्थित पुरुषों की आँखें भी बरसने लगती हैं। उन गीतों से संपन्न हो रहे संबंध की पवित्रता, सर्वमान्यता, मांगलिकता तथा आशिर्वचनों की वर्षा के साथ विछोह की जो धारा फूटती है उसमें आचार्यगण के कर्मकांड की वेदध्वनि स्वत: मंद पड़ जाती है। उन गीतों में कन्या की भावना इन शब्दों में फूटती है कि ''बाबाऽबाऽबा पुकरींला बाबा ना बोलेलें हो। बाबा के बलजोरी सेनुर बर डालेलें हो।''

लोकगायक **अजीत कुमार अकेला**

विवाह के साथ संपन्न होने वाले गुरहथी तथा मंगढकी के गीतों में भसुर या भैंसुर और श्वसुर को मांगलिक गालियाँ सुननी पड़ती हैं। सबके उपरांत दुलहन के साथ दूल्हा जब अपने घर लौटता है तो वहाँ उसके पक्ष की नारियाँ दुलहन को कम गुणशालिनी सिद्ध करने पर आमादा हो जाती हैं। वहाँ परीछावन से लेकर कोहबर तक के गीतों में उल्लास ही उल्लास छलकता-उफनता रहता है। विवाह के विभिन्न प्रसंगों के गीतों के साथ देवी के भक्तिमूलक गीतों के प्रसंग भी जुड़े होते हैं।

पर्वगीतों के रूप में भक्तिमूलक गीतों का गायन होता है। ग्रामदेवी, शंकर-पार्वती या गंगा की भक्ति के गीतों के अलावा छठ के गीत इस संदर्भ में विशेष उल्लेखनीय हैं। छठ बिहार का अपना प्रादेशिक पर्व है और उसके गीतों की अपनी सर्वथा अलग धुन तथा लय होती है। ये गीत बिहार की कृषि संस्कृति वाले परिवार की समर्पित सूर्यभक्ति की निष्कलुष व्यंजना करते हैं। ''काँच ही बाँस के बहँगिआ बहँगी लचकत जाय'' से अलग ''उगीं ना सुरुजदेव लीहीं ना अरघिआ'' में एक भिन्न छन्द बनता है। पर्वों के भक्तिमूलक लोकगायन में पूर्णत: पारिवारिक-सामाजिक संदर्भ होता है जिसमें देव या देवी की कृपालुता, रुष्टता, लीला, स्वरूप, सौन्दर्य आदि का वर्णन-चित्रण हुआ रहता है।

बिहार के श्रमगीतों में जँतसार तथा रोपनी-गीतों का विशेष महत्त्व है। जाँते में गेहूँ या अन्य अन्न पीसती नारियाँ जँतसार गाकर श्रम में लय पैदा करती हैं तो धान के बिचड़ों की रोपनी करती मजदूरिनों का समूह जब अपना गीत छेड़ता है तो उसकी लय संपूर्ण वातावरण में एक उर्वर मिठास

घोल जाती है। बधार में हल जोतते हलवाहे या गाय-भैंस चराते चरवाहे विरहा, लोरिका, नैका या जो अन्य प्रेमगीत-गाथा गीत गाते हैं उन्हें भी एक हदतक श्रमगीत के अंतर्गत परिगणित किया जा सकता है परंतु ग्वालों के निजी उत्सव सोहराई के मौके पर विरहा के अनिवार्य गायन की परंपरा है।

होली और चैता बिहार के उत्सव गीत भी हैं और ऋतुगीत भी। वसंत पंचमी के दिन से वसंतोत्सव तथा होली गायन का प्रारंभ होता है जो चईत (चैत) की परिबा (प्रतिपदा) के दिन पूर्णता पाता है तथा उस दिन ही अर्द्धरात्रि के बाद से चैता गायन का प्रारंभ हो जाता है। ये दोनों ढोलक, झाल, करताल आदि लोकवाद्यों के साथ गाये जाने वाले समूहगान हैं। बिहार के होली-चैता गायन की विशेषता है कि इनके गायन में नारियों की भागीदारी नहीं होती। होली में तो पौरुष भाव से पूर्ण उल्लास संयोग शृंगार की अनेक मर्यादाएँ तोड़ जाता है। बिहार के होली गीतों पर व्रजभाषा तथा अवधी के होरी गीतों का भी गहरा प्रभाव रहा है परंतु भोजपुरी, मगही, मैथिली आदि बिहार की अपनी बोलियों में होली की विशेष उन्मुक्तता देखी जाती है। ''गोरिआ करि के सिंगार आँगना में पीसेली हरदिया'' या ''बाबा हरिहरनाथ, बाबा हरिहरनाऽऽथ, सोनपुर में होली खेले'' में बिहार का अपना उल्लासपूर्ण उन्मुक्तता पा लेता है। होली गायन के अंत में 'लहरा' गाया जाता है और आधी रात के बाद एक या दो चैता गायन के साथ महीने भर चले होली गायन को विश्राम तथा अगले महीने भर (पूरे चैत) के चैता गायन को प्रारंभ मिलता है।

बिहार के लोकगायन का अभिन्न अंग ढोलक नामक बाजा रहा है। होली, चैता या रामायण गाते समय इसके वादन के एक से एक माहिर देखे जाते हैं। बक्सर जिले के बराढ़ी गाँव के रामकृतार्थ मिश्र उर्फ गाँधी जी के ढोलकवादन को तो कलकत्ते तक ख्याति मिली थी। भोजपुर जिले के बलिगाँव ग्राम के स्व० किसुनदेव राय और छोटका सँसराव के कंठासुर राय की अद्‌भुत कला उनके साथ ही चली गई। बक्सर जिले के ही बलुआँ गाँव के सीदहिन गोंड ने अपनी हाजिरजवाबी, आशुकवित्व तथा हुडुक वादन में दूर-दूर तक प्रसिद्धि पाई थी।

विंध्यवासिनी देवी, भरत सिंह भारती, शारदा सिन्हा आदि ने बिहार के लोकगायन को रेडियो, दूरदर्शन आदि के द्वारा व्यापक विस्तार तथा प्रसार दिलाने का प्रशंसनीय कार्य किया है। युवा पीढ़ी में अजित कुमार अकेला, भरत शर्मा व्यास तथा मनोज तिवारी ने ख्याति पाई है परंतु वास्तविकता यह है कि लोकगायन की आत्मा आज भी ग्रामीण नारियों तथा पुरुषों के कंठ से फूटे विभिन्न गीतों में बोलती है। सोहराई के मौके पर एक मदमस्त ग्वाला बिरहा का जो आलाप लेता है वही उस बिरहा का वास्तविक लौकिक स्वरूप होता है।

अभ्यास

1. लोकगीत किसे कहते हैं?
2. लोकगीत के प्रमुख भेदों का परिचय दें।
3. संस्कार गीत किसे कहते हैं?
4. विवाह के गीतों में से किन्हीं पाँच के परिचय दें।
5. आपके अपने क्षेत्र गें विवाह के किस-किस प्रसंग के गीत गाये जाते हैं?
6. किस पर्व के गीत आपको सबसे अधिक अच्छे लगते हैं और क्यों?
7. शास्त्रीय गीत तथा लोकगीत का सामान्य अंतर स्पष्ट करें।
8. अपने वर्ग में विभिन्न लोकगीतों के महत्त्व पर एक परिचर्चा आयोजित करें।
9. अपने क्षेत्र में प्रचलित लोकगीतों की एक अलग पुस्तिका तैयार करें।
10. अपने गाँव या नगर के लोकगायकों की एक सूची बनाएँ और उनके परिचय लिखें।

पटना कला एवं शिल्प महाविद्यालय (छायांकन : अभिषेक चौबे)